

जनजातीय समाज एक स्वप्न की तरह क्यों है ?

भारती शुक्ला

प्राध्यापक, हवाबाग महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

शोध सार

जनजातीय समुदाय पर लिखना सही मायने में अपने आप को आईना दिखाने जैसा है। परंतु देखने का साहस हमें बटोरना होगा क्योंकि जनजातीय समुदाय की जीवन शैली उनका प्रकृति के साथ गहरा सख्त्व हमें अपनी जीवन शैली और प्रकृति के साथ संवाद को देखने बाध्य करता है। आधुनिक समाज की विकास की अवधारणाएं प्रकृति से होकर गुजरती हैं और विनाश पर खत्म होती हैं। बेसुरे पर्यावरण एवं धरती के बढ़ते हुए तापमान को देख कर यह बात समझी जा सकती है। हमारा पूरा दर्शन अपने आप के अंदर देखने को कहता है जहाँ हम अपनी वे तमाम छबियाँ देखते हैं जिनसे प्रकटतः हम बचते रहते हैं या जिन्हें हम महसूस ही नहीं कर पाते। आधुनिक बाज़ार केंद्रित दुनिया मनोरंजन के साधन जुटाने, खोजने/ करने के परम आनंद का लक्ष्य रखती है जहाँ अपने साथ होने का अवकाश ही नहीं होता/मिलता/ न कोई लेना चाहता है। तब प्रकृति से बिगड़े संवाद को अनुभव करने की चाहत पैदा होना भी असंभव है। बड़े आनंद के लिए बाक़ी सब बहुत छोटा है। लोगों का उजड़ना, जंगलों का कटना तो होगा ही! यह मान लिया गया है। पर बात इतनी तो नहीं ये सब कुछ लोगों की प्राणवायु की समाप्ति की शर्त पर हो रहा है यह बात समझने को अभी जनमानस तैयार नहीं है। यहाँ जनजातीय समुदाय की क्या भूमिका है उसे समझना जरूरी है। यही समुदाय है जो अपने जीवन की सुविधाओं के लिए प्रकृति पर आघात नहीं करता, यही वह समुदाय है जो प्रकृति को अपनी माँ का दर्जा देता है उसकी सुरक्षा, सम्मान, संरक्षण उनके जीवन की पहली प्राथमिकता है।

बीज शब्द- जनजातीय, आदिवासी, कविता, आधुनिक समाज।

प्रस्तावना

जनजातीय समुदाय पर लिखना सही मायने में अपने आप को आईना दिखाने जैसा है। परंतु देखने का साहस हमें बटोरना होगा क्योंकि जनजातीय समुदाय की जीवन शैली उनका प्रकृति के साथ गहरा सख्त्व हमें अपनी जीवन शैली और प्रकृति के साथ संवाद को देखने बाध्य करता है। आधुनिक समाज की विकास की अवधारणाएं प्रकृति से होकर गुजरती हैं और विनाश पर खत्म होती हैं। बेसुरे पर्यावरण एवं धरती के बढ़ते हुए तापमान को देख कर यह बात समझी जा सकती है। हमारा पूरा दर्शन अपने आप के अंदर देखने को कहता है जहाँ हम अपनी वे तमाम छबियाँ देखते हैं जिनसे प्रकटतः हम बचते रहते हैं या जिन्हें हम महसूस ही नहीं कर पाते। आधुनिक बाज़ार केंद्रित दुनिया मनोरंजन के साधन जुटाने, खोजने/ करने के परम आनंद का लक्ष्य रखती है जहाँ अपने साथ होने का अवकाश ही नहीं होता/मिलता/ न कोई लेना चाहता है। तब प्रकृति से बिगड़े संवाद को अनुभव करने की चाहत पैदा होना भी

असंभव है। बड़े आनंद के लिए बाक़ी सब बहुत छोटा है। लोगों का उजड़ना, जंगलों का कटना तो होगा ही! यह मान लिया गया है। पर बात इतनी तो नहीं ये सब कुछ लोगों की प्राणवायु की समाप्ति की शर्त पर हो रहा है यह बात समझने को अभी जनमानस तैयार नहीं है। यहाँ जनजातीय समुदाय की क्या भूमिका है उसे समझना जरूरी है। यही समुदाय है जो अपने जीवन की सुविधाओं के लिए प्रकृति पर आघात नहीं करता, यही वह समुदाय है जो प्रकृति को अपनी माँ का दर्जा देता है उसकी सुरक्षा, सम्मान, संरक्षण उनके जीवन की पहली प्राथमिकता है। यहाँ आदिवासी समुदाय के प्रतिनिधि, अत्यधिक प्रभावशाली कवियों की कविताओं के साथ इस आलेख को प्रारंभ करना चाहती हूँ—

हम कविता नहीं करते
अपनी बात कहते हैं
जैसे कहती है धरती, आसमान, पहाड़, नदियां
जैसे कहते हैं
कुसुम के फूल/महुआ के फूल
जामुन की गंध/कटहल की मिठास
अभी-अभी पैदा हुआ जीव
और जंगल की सनसनाती हवा।

वंदना टेटे द्वारा लिखित यह कविता यहीं समाप्त नहीं होती आगे जीव जंतु जैसे खुद बोल उठते हैं और वंदना कहीं पीछे बैठे बस मुस्करा रही होती हैं। वंदना टेटे की कविता में मौजूद जंगल की आदिम गंध ने, उसकी ध्वनात्मकता ने, जीव जंतु के संसार ने मुझे मोह लिया। यह कविता विचार शून्यता के बाद जन्म लेने वाली संवेदनात्मक रूप से भरेपन की कविता है वैसी ही जैसे आप जंगल जाएं और वहां सन्नाटे का जीवितपन आपको छू जाए, जैसे वहां की एक कुंवारी सी गंध में आप डूब जाएं, जैसे बीहड़ के बीच अकस्मात कहीं पानी की झिरी फूट जाए वैसी ही कविता है वंदना टेटे की, हंसती गाती बल्कि सच कहूं तो नाचती हुई कविता-

मैं बारिश में थी और बारिश मुझ में
मेरे पंख भीग रहे थे
देह नदी हो गई थी
शब्द पानी-पानी हो रहे थे
हंसी झरने की तरह शोर कर रहे थे
बदमाश बादल मेरे पीछे पड़ा था
किसी आवारा शोहदे की तरह।

वंदना झारखंड से आती हैं वहां नैसर्गिकता बची हुई है बल्कि यह कहना चाहिए कि उसे बचाया गया है यह तभी बची रह सकती है या बचाई जा सकती है जब हमारे अंदर उन स्रोतों के ठिकाने हों जो कभी भी, कहीं भी पथरीलेपन

के बीच चमकीली दूधिया रेखा की तरह फूट पड़ते हैं। सोतों का यह ठिकाना बंदना के अंदर भी है इसलिए उनकी कविता में निर्मलता है पारदर्शीपन है।

वंदना जंगल के बीच हैं पर दुनिया से कटी नहीं है पृथ्वी के इस प्रथम नागरिक की चिंताएं उनकी कविता में दिखाई देती है-

सलवा जुड़ूम के डर से
फुसफुसाती है जिंदगी
यहां बहेगी बदलाव की बयार
मुस्कराएगा चांद
यह उम्मीद कोंधती रहती है
बिजली की तरह
जब पके धान के खेतों से दूर
मराड़ बुरु पहाड़ पर
नाचते हैं काले-काले बादल।

यह भविष्य की कविता है भविष्योन्मुखी कविता है। इन कविताओं में जो राजनीतिक चेतना है वह किसी विचारधारा से नहीं बंधी है बल्कि मनुष्य के जीवन संदर्भों से, उनके हकों से और जीवन के मूलाधारों से सृजित हुई है।

कौन है वो लोग
जिन्होंने शब्दों/बोलियों को गरिमा बक्शी
चित्रों को कामशास्त्र
अज्ञता नहीं होने दिया
कौन है वह लोग जो
नख-शिख वर्णन के बगैर
दुनिया का सबसे सुंदर
प्रेम गीत गाते हैं।

वंदना की कविताओं में मौजूद ताजगी सुगंधित साबुन से नहाने के बाद मिलने वाली ताजगी नहीं है यह ताजगी है विचारों की, भाषा की और अभिव्यक्ति की, जो हमें याद दिलाती है धरती की थरथराहट की, किनार की आदिम गंध की जिसे सिर्फ महसूस किया जा सकता है। साहित्य एवं व्याकरणवेत्ता इन कविताओं में बहुत कुछ ढूँढ़ेंगे, वह सब जब उन्हें नहीं मिलेगा तब साहित्य शास्त्रीय मानदंडों पर आलोचना करेंगे परंतु हमें समझना होगा कि किस

कविता और कवि में क्या ढूंढा जाना चाहिए और क्या नहीं। इसी तरह जसिंता केरकेट्टा की कविताएँ हैं जिनमें आदिवासी समुदाय की चिंताओं को चिह्नित किया जा सकता है—

अ से अनार लिखा

उन्होंने कहा

आह कितना सुंदर

आ से आम लिखा

उन्होंने आम के गुण गाये

जब अ से अधिकार लिखा

वे भड़क गए।

- जसिंता केरकेट्टा

जसिंता एक युवा आदिवासी कवि और रचनाकार हैं। उनके बारे में ये याद रखना जरूरी है कि आदिवासियों के खिलाफ़ खड़े पूँजीतंत्र के कारण उन्होंने अनेक पुरस्कार/सम्मान अस्वीकार किए। ये अस्वीकृति बनी कैसे उस इतिहास की, उन हालातों की पड़ताल जरूरी नहीं। आदिवासी समुदाय से बेहतरीन साहित्यकार कुछ सालों में सामने आए हैं जो प्रकृति के स्पंदन को अभिव्यक्त कर रहे हैं। यह उनके साहस और प्रकृति से अन्यतम अनुराग का प्रतीक है वंदना टेटे, जसिंता केरकेट्टा, निर्मला पुतुल इनमें प्रमुख रचनाकार हैं। इन संवेदनशील कविताओं के बीच ही मुझे वे पुरखिने याद आ रही हैं जिन्होंने हमें ये सवाल उठाने लायक बनाया।

जनजातीय संघर्ष की बात करते हुए मुझे 1 “अमेरिका के रेड इंडियंस को याद करना जरूरी लगता है खास तौर से इस समुदाय की महिलाओं ने अपनी संस्कृति, भाषा एवं भूमि को बचाने के लिए लंबे और कठिन संघर्ष किए। परिवार के मूलाधार की तरह इन महिलाओं ने डटकर आने वाले संकटों का सामना किया। अपनी राजनीतिक आत्म निर्भरता को बनाने के लिए उन्होंने women of all red nations (WARN) जैसे आंदोलन का नेतृत्व किया यहाँ पर उन कुछ महिलाओं के नाम उद्धृत करना जरूरी है जिन्होंने साहस के साथ आंदोलन की अगुवाई की है। इनमें - zitkala-sa का नाम महत्वपूर्ण माना जाता है जिन्होंने 19 वीं -20 वीं सदी में मूल निवासियों के नागरिक अधिकारों को पाने के लिए संघर्ष किया। भू संपत्ति पर अधिकार के कानूनी संघर्ष में एलोइस कोबल (eloise cobell) ने अमेरिकी सरकार से एक बड़ा मुकदमा (class-action law suit) जीता। जो मूल निवासियों की सुरक्षा की दृष्टि से ऐतिहासिक जीत थी। (विकिपीडिया से साभार)

इंडीजीनस (रेड इंडियंस को अब यह सम्मानजनक नाम दिया गया है) महिला समुदाय ने न सिर्फ अपनी लड़ाई लड़ी बल्कि इनकी तेजस्वी उपस्थिति एवं दखल ने अमेरिकी महिलाओं के मताधिकार को भी प्रभावित किया। यह प्रभाव कितना गहरा तथा व्यापक था; इस पर सैली रोश बैगनर ने विस्तृत शोधकार्य किया। अपने अध्ययन पत्र में वो लिखती

हैं—“मताधिकार आंदोलन की नेता मटिल्डा जोसलिन गेज ने इरोक्वाइस संघ के बारे में लिखा था जिसका क्षेत्र न्यूयार्क राज्य में फैला हुआ था—न्याय इससे अधिक परिपूर्ण कभी नहीं था सभ्यता इस से अधिक उन्नत कभी नहीं थी। मटिल्डा जोसलिन गेज, एलिजाबैथ केंडी, स्टेटन और सुजान बी एंथोनी ये तीनों महिलाएं नेत्रवत्त्वकारी भूमिका में थीं। गेज उन महिलाओं से भी आगे थीं जो अपने समय से आगे थीं। जैसे ही मताधिकार आंदोलन रूढ़िवादी हो गया गेज आंदोलन से अलग हो गईं”²

(शोध पत्र-किस प्रकार मूल अमेरिकी महिलाओं ने महिला अधिकार आंदोलन को प्रेरित किया-बेल मोंट पॉल महिला समानता राष्ट्रीय स्मारक, महिला अधिकार राष्ट्रीय पार्क)

इन महिलाओं ने चालीस बरसों तक निरंतर महिला अधिकारों के लिए काम किया। उन्नीसवीं सदी के मध्य तक भी अमेरिकी महिलाओं, जिनमें श्वेत, अश्वेत, विवाहित, अविवाहित, गुलाम सभी महिलायें शामिल थीं इनका सरकारी निर्णयों में कोई योगदान नहीं था। इनके लिए वोट देना गैरकानूनी था, न वो कोई कानूनी लड़ाई लड़ सकती थीं न ही कोई वसीयत लिख सकती थीं।

यह स्थिति 19वीं सदी में सर्वाधिक उन्नत देश की महिलाओं की थी। इन हालातों में जिन महिलाओं ने संघर्ष की अगुवाई करने का साहस किया उन्हें याद किया जाना ज़रूरी लगा इसलिए यहाँ संक्षेप में ब्योरा दिया है क्योंकि यह आलेख अमेरिका की जनजातीय महिलाओं के संघर्ष पर केंद्रित नहीं है इसलिए इस पक्ष को और विस्तार से नहीं लिखा जा रहा। उनके महती योगदान को याद किया जाना यहाँ बहुत ज़रूरी था।

(यह आलेख महिला मताधिकार शताब्दी होगी WS सेंसेक्स द्वारा 17 अप्रैल 20 सभी को डब्ल्यू एस एस के blogब्लॉग सफ़ के एक भाग के रूप में प्रकाशित किया गया था)

“भारत का सबसे बड़ा महिला संगठन क्रांतिकारी आदिवासी महिला संगठन है। जिसके सदस्यों की संख्या लगभग एक लाख है जो लगातार आदिवासी संस्कृति, अपनी धरती और जंगल को बचाने के लिए संघर्ष करता रहा है। 1857 की गदर से पहले आदिवासी अंग्रेज़ी राजके जंगल में घुसपैठ के खिलाफ़ लड़ते रहे हैं” आज भी उनकी यह लड़ाई खत्म नहीं हुई है बल्कि देशी सत्ताओं से लड़ने के लिए उन्हें और ज़्यादा संघर्ष करना पड़ रहा है और ज़्यादा अपमान और अत्याचार का सामना करना पड़ रहा है। अंग्रेज़ी राज से हुए हूल, उलगुलान और भूमकाल जैसे विद्रोह इतिहास में रेखांकित किए गए। ”³

(द क्रेडिबिल हिस्ट्री के अनुसार-“फूलो और झानू ने आंदोलन के लिए महिलाओं को संगठित किया और विद्रोह को एक अनुशासित व्यवस्थित लड़ाई में बदल दिया। उन्होंने महिलाओं की छोटी- छोटी गुप्तचर समितियां बनाई,

प्राप्त सूचनाओं को क्रांतिकारियों तक पहुँचाने के लिए अलग-अलग दल बनाए एवं नए-नए तरीके ईजाद किए। ”ये क्रांतिकारी महिलायें थीं जिन्होंने संघर्ष के लिए कोई समझौते नहीं किए।

1855 में सीदो और कानू सन्थाल हूल क्रांति के नेता थे इनका पूरा परिवार महाजनों, साहूकारों और उनके लठैतों के खिलाफ आदिवासियों द्वारा किए गए विद्रोह में सबसे आगे था, इन साहूकारों को ईस्ट इंडिया कंपनी का पूरा संरक्षण प्राप्त था। अत्याचारों से परेशान होकर आदिवासियों ने अंग्रेजी कैम्प पर हमला किया जिसमें 21 अंग्रेज सैनिक मारे गये और और बीरभूम में सन्थाल पर आदिवासियों ने कब्जा कर लिया।

फूलों और झानों दोनों को अंग्रेजों ने पेड़ से लटका कर फाँसी की सजा दे दी। सन्थाली साहित्य में, गीतों में आज भी इन स्त्रियों की वीरता और साहस को गाया जाता है। बिरसा मुंडा “(1894-1900) के विद्रोह में भी पुरुष आदिवासियों के साथ बिरसा की साली के अलावा माँझी, नेगी, थोंगी आदि महिलाओं ने नेतृत्वकारी भूमिका निभाई थी। बिस्सा इन पर सर्वाधिक विश्वास करते थे। अंग्रेजों के खिलाफ लड़े। इस युद्ध को उलगुलान कहा जाता है। बाक्री मुंडा भाला, कुल्हाड़ी चलाने में निपुण योद्धा थे। इसी तरह मुंगारी उराँव का संघर्ष भी याद किया जाना चाहिए। मुंगारी असम के आदिवासी समुदाय की पहली महिला शहीद थी। भगतसिंह ने कहा था गोरे अंग्रेजों की जगह काले अंग्रेजों के आने से कोई फर्क नहीं पड़ेगा। इसके सही मायने आदिवासी समुदाय ने समझे। महाराष्ट्र में जमींदारों के शोषण के विरुद्ध संघर्ष में (1945-46) में वली विद्रोह में भी आदिवासी महिलाओं ने नेतृत्व किया था। यहाँ प्रथा की तरह था कि मौसम की पहली बारिश में आदिवासियों को अपनी जमीन पर नहीं बल्कि जमींदार के खेतों पर काम करना पड़ेगा। महिलाओं को जमींदार मनमर्जी से उठवा लेते थे। इस भयानक यौन शोषण के खिलाफ गोदावरी पारुलकर ने मुख्य भूमिका निभाई इनका इतिहास में नाम दर्ज है परंतु इनके पीछे खड़ी अनेक महिलाओं की ताकत के बिना कुछ भी होना संभव नहीं था जिनके नाम इतिहास में दर्ज नहीं हैं”। ३

जल-जंगल-जमीन को बचाने के लिए ही विश्व के पूँजीवादी तंत्र से पृथ्वी के मूल निवासियों के लंबे संघर्ष का इतिहास है। ये दुर्भाग्यपूर्ण सत्य है कि जो समुदाय प्रकृति का मूल संरक्षक हैं उन्हें सत्ताओं ने क्रूर उपभोक्ता की तरह प्रस्तुत किया और उन्हें शक के दायरे में खड़ा किया जबकि यही वे लोग हैं जो प्रकृति की अथाह संपदा को संरक्षित करने को अपने जीवन का मूलधार मानते हैं। किंतु स्वार्थ परक राजनीतिक इरादों ने और अन्तहीन अभीप्साओं ने उन विश्वासों को भयानक ठेस पहुँचाई है जो दुनिया को सुंदर बनाए रखने के लिए कृत संकल्पित है। सोनी सोरी को यहाँ याद किया ही जाना चाहिए।

। हम जानते हैं कि कुल आबादी का करीब 9% आदिवासी समुदाय है। 2011 की जनगणना के आधार पर ये आंकड़ा माना जा रहा है किंतु कुल जनसंख्या का भारत में आदिवासी समुदायों में रोजगार मुख्य रूप से कृषि और मजदूरी पर निर्भर है (59.5%) सरकारी नौकरियों में 6-7% के बीच है। शासकीय सेवाओं में आरक्षण के बावजूद इनकी सहभागिता 6-7% है। 77 साल की आजादी के बाद यह आंकड़ा चौंकाता है। तिस पर बहुसंख्यक समाज

आरक्षण के खिलाफ खड़ा है। 5000 साल सवर्ण जातियों को निर्विरोध आरक्षण मिला रहा जिसे आज भुला दिया गया है। बहरहाल समाज में निहित असमानता के गड्ढों को भरने का कोई समतामूलक आईडिया दिखाई नहीं दे रहा है। फलस्वरूप आज जल जंगल ज़मीन के अलावा शिक्षा स्वास्थ्य रोज़गार भी संघर्ष के एजेंडे में जुड़ गया है यहाँ “कुछ उन आदिवासी महिला साथियों का उल्लेख करना चाहती हूँ जो आज भी पूरी शिद्दत से, पूरे साहस से सत्ताओं की अराजकता के खिलाफ प्रकृति के पक्ष में क्रदम ताल कर रही है। टाटा स्टील फाउंडेशन द्वारा प्रकाशित श्रेया अधिकारी के शोध आलेख से यह जानकारी प्रस्तुत करते हुए मुझे खुशी हो रही है। अपने अपने इलाकों में अपने अधिकारों के लिए संघर्ष कर रहे हैं आमना खातून उत्तराखंड राज्य की एक खानाबदोश जनजाति वन गुज्जर समुदाय से आती है आमना पारंपरिक प्रथाओं का दस्तावेजीकरण कर गुज्जर समुदाय की संस्कृति के संरक्षण में महिलाओं की भूमिका पर शोध कर रहे हैं पूर्व में गुज्जर समुदाय में विवाह के लिए दो परिवारों के बीच लड़कियों के अदला- बदली की परंपरा थी जिससे विवाह के बाद परिवारों के अच्छे- बुरे व्यवहार का प्रभाव लड़कियों पर पड़ता था दूसरी बात लड़कियों की इच्छाओं का, चुनाव का कोई प्रश्न था ही नहीं। वर्तमान में यह परंपरा कुछ शिथिल पड़ चुकी है किन्तु इन परंपराओं के महिलाओं पर पड़े दूरगामी प्रभाव पर आमना शोध अध्ययन कर रही है। कर्नाटक के कारवार ज़िले में जंगलों से घिरे शहर से दूर सिद्दी समुदाय के लगभग पचास लोग रहते हैं जिनके पूर्वज दक्षिण अफ्रीका से आए थे जों देश के अन्य इलाकों में छोटे छोटे समुदाय में रहते हैं इसी समुदाय की है जूलियाना पेड्रो फर्नांडिस। सिद्दी समुदाय के पास अपना कोई पहचान पत्र नहीं है ये पूरी तरह से देश से कटे हुए हैं इनके कोई भी मौलिक अधिकार नहीं है। जूलियाना अपने समुदाय की के लिए काम कर रही है ये लोग पहचान के संकट से गुजर रहे हैं हम जानते हैं कि वर्तमान में हमारी पहचान साबित करना अपने आप को नागरिक साबित करना कितना दुःसाध्य है। जूलियाना अपने समुदाय को संरक्षित करने के लिए मेहनत मेहनत कर रही है। साथ ही इनके इतिहास का दस्तावेजीकरण भी कर रही है। इसी तरह है कल्पना चौधरी सूरत ज़िले की महुआ तहसील के कच्छल गाँव की ग्राम पंचायत की सरपंच है इस पंचायत की सभी पदाधिकारी महिलाएँ हैं कल्पना अपने गाँव में शिक्षा में सुधार लाने के लिए बड़े पैमाने पर कार्य कर रही है। इसके साथ ही गाँव की महिलाओं के लिए प्रकृति कैटरिंग सर्विस का कार्य कर रही है जिससे आदिवासी महिलाओं को आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर तार मिल रही है।”^४

जनजातीय समाज पूरी दुनिया का मूलाधार है इसके बिना एक स्वास्थ्य संतुलित समता मूलक समाज की कल्पना भी संभव नहीं है। जिस लैंगिक असमानता से आज देश बुरी तरह पीड़ित है उस से यह समुदाय लगभग मुक्त है। जिस पर्यावरणीय संकट से दुनिया जूझ रही है वह इस समुदाय के हाशिए पर धकेले जाने के कारण निर्मित स्थिति है अन्यथा प्रकृति के सहोदर इन समुदायों की जीवनशैली को यदि आधुनिक समाज में अपना आधार बनाया होता तो पूंजी तंत्र की हिंसा की कार्यवाहियों के परिणाम आज हम नहीं झेल रहे होते।

प्रसिद्ध इतिहासकार रामचंद्र गुहा अपनी पुस्तक इंडिया आफ्टर गांधी के प्रथम अध्याय में लिखते हैं कि हमें भारत पर बात या चर्चा क्यों करना चाहिए? इस प्रश्न के उत्तर में राम चंद्र गुहा कहते हैं भारत केवल मात्र एक भौगोलिक

विस्तार का नाम नहीं है भारत एक कल्पना का, एक आदर्श का, एक मूल्य का, एक विचार का नाम है और हमें इस भूल विचार को समझना होगा। ” ये संपूर्ण, संप्रभुता संपन्न भारत है जिसे हमारा संविधान बनाता है।

इस संदर्भ में यदि जनजातीय समुदाय को देखा जाए तो जिन वैचारिक मूल्यों की हम चर्चा करते हैं जो हमारे आदर्श है वो इस समुदाय का जीवन है उन्हें प्राप्त करने इन्हें कोई संयुक्त प्रयास नहीं करना होते जबकि बहुसंख्य को इन प्रयासों की सख्त आवश्यकता है।

संदर्भ-

1. विकिपीडिया. <https://www.wikipedia.org/>
2. वैगनर, सैली रोश। . किस प्रकार मूल अमेरिकी महिलाओं ने महिला अधिकार आंदोलन को प्रभावित किया। बेलमोंट राष्ट्रीय स्मारक, महिला अधिकार पार्क.
3. आज्ञाद, सीमा. फॉरवर्ड प्रेस वेब पोर्टल पर प्रकाशित लेख। फॉरवर्ड प्रेस.
4. कुमार, राकेश. जो इतिहास में नहीं है। भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली,
5. अधिकारी, श्रेया. शोध पत्र। क्लाइमेट वर्टिकल.

